INTERNATIONAL NEWS AND VIEW CORPORATION
INVC
अंतरराष्ट्रीय समाचार एवं विचार निगम

इस प्यास की पड़ताल जरूरी है

By : INVC Team Published On : 24 Apr, 2016 09:12 AM IST

- अरुण तिवारी -

यह सच है कि 1960 के दशक में अमेरिका की औद्योगिक चिमनियों से उठते गंदे धुएं के खिलाफ आई जन-जागृति ही एक दिन 'अंतर्राष्ट्रीय पृथ्वी दिवस' की नींव बनी। यह भी सच है कि धरती को आये बुखार और परिणामस्वरूप बदलते मौसम में हरित गैसों के उत्सर्जन में हुई बेतहाशा बढ़ोत्तरी का बड़ा योगदान है। इस बढ़ोत्तरी को घटोत्तरी में बदलने के लिए दिसंबर, 2015 के पहले पखवाड़े में दुनिया के देश पेरिस में जुटे और एक समझौता हुआ।

गौर करने की बात यह है कि पेरिस जलवायु समझौता कार्बन व अन्य हरित गैसों के उत्सर्जन तथा अवशोषण की चिंता तो करता है, किंतु धरती के बढ़ते तापमान, बदलती जलवायु और इसके बढ़ते दुष्प्रभाव में बढ़ती जलनिकासी, घटते वर्षा जल संचयन, मिट्टी की घटती नमी, बढ़ते रेगिस्तान और इन सभी में खेती व सिंचाई के तौर-तरीकों व प्राकृतिक संसाधनों को लेकर व्यावसायिक हुए नजरिये की चिंता व चर्चा... दोनो ही नहीं करता। हमें चर्चा करनी चाहिए कि भारत के 11 राज्यों में सुखाड़ को लेकर आज जो कुछ हायतौबा सुनाई दे रही है, क्या उसका एकमेव कारण वैश्विक तापमान में वृद्धि अथवा परिणामस्वरूप बदली जलवायु ही है अथवा दुष्प्रभावों को बढ़ाने में स्थानीय कारकों की भी कुछ भूमिका है ?

इस चर्चा के लिए आज हमारे सामने दो चित्र हैं:

पहला चित्र भारत में पानी की सबसे कम वर्षा औसत (50 मिलीमीटर) वाले ज़िला जैसलमेर का है ; जहां गत वर्षों में चार मिलीमीटर के निचले स्तर तक जा पहुंची वार्षिक बारिश के बावजूद न आत्महत्यायें हुईं, न पानी को लेकर कोई चीख-पुकार मची और न ही किसी आर्थिक पैकेज की मांग की गई। 1100 मिलीमीटर के हमारे राष्ट्रीय वार्षिक वर्षा औसत की तुलना में पश्चिमी राजस्थान का वार्षिक वर्षा औसत मात्र 313 तथा पूर्वी राजस्थान में 675 है। वार्षिक वर्षा गिरावट में राष्ट्रीय और राजस्थान राज्य स्तरीय औसत (राष्ट्रीय : 42 फीसदी, राजस्थान : 40.19 फीसदी) में मामूली ही अंतर है। इस दृष्टि से देखें तो देश के अन्य राज्यों की तरह राजस्थान के भी कई जिलों को भी तीन साल से सूखाड़ग्रस्त कहा जा सकता है। किंतु यहां सूखाड़ में भी खेती है, पीने के पानी का इंतजाम है और शांति है।

दूसरा चित्र मराठवाड़ा, मध्य महाराष्ट्र और विदर्भ का हैं, जहां के वार्षिक वर्षा औसत क्रमश: 882, 901 और 1,034 मिलीमीटर हैं। सबसे ज्यादा चीख-पुकार वाले ज़िला लातूर का वार्षिक वर्षा औसत 723 मिलीमीटर है। 50 फीसदी गिरावट के बाद लातूर में हुई 361 मिलीमीटर वर्षा का आंकड़ा देखें। यह आंकड़ा भी जैसलमेर की सामान्य वर्षा से सात गुना है।

गौर कीजिए कि महाराष्ट्र में पानी को लेकर चीख-पुकार इस सबके बावजूद है कि पिछले 68 वर्षों में सिंचाई व बाढ़ नियंत्रण के नाम पर देश के कुल बजट का सबसे ज्यादा हिस्सा महाराष्ट्र को हासिल हुआ है। सिंचाई बांध परियोजनाओं की सबसे ज्यादा संख्या भी महाराष्ट्र के ही नाम दर्ज है। वर्ष 2012 में केन्द्रीय जल आयोग द्वारा जारी आंकड़ों के मुताबिक भारत में कुल जमा निर्मित और निर्माणाधीन बांधों की संख्या 5187 है, जिसमें से 1845 अकेले महाराष्ट्र में है।

विरोधाभास यह है कि सबसे बड़े बजट और ढेर सारी परियोजनाओं के बावजूद अंगूर और काजू छोड़कर एक फसल ऐसी नहीं, जिसके उत्पादन में महाराष्ट्र आज देश में नंबर एक हो। कुल कृषि क्षेत्र की तुलना में सिंचित क्षेत्र प्रतिशत के मामले में भी महाराष्ट्र (मात्र 8.8 प्रतिशत) देश में सबसे पीछे है। सिंचाई क्षमता के मामले में महाराष्ट्र का नंबर आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश के बाद में ही आता है। विचारणीय प्रश्न है कि पानी के नाम का इतना पैसा खाने के बावजूद, यदि आज महाराष्ट्र के कुल 43,000 गांवों में से 27,723 को सूखाग्रस्त घोषित करने की बेबसी है तो आखिर क्यों ? महाराष्ट्र के अधिकांश बांधों के जलाश्यों में पानी क्यों नहीं है ? आखिर यह नौबत क्यों आई कि महाराष्ट्र सरकार को 200 फुट से गहरे बोरवैल पर पाबंदी का आदेश जारी करना पड़ा है।

इसका **एक उत्तर** यह है कि महाराष्ट्र सरकार ने सूखे में भी इंसान से ज्यादा फैक्टरियों की चिंता की। महाराष्ट्र में लगभग 200 चीनी फैक्टरियां हैं। उसने अकेले एक चीनी फैक्टरी को देने के लिए लातूर के निकट उस्मानाबाद के तेरना जलाश्य का पांच लाख क्युबिक मीटर पानी जैकवैल में रिजर्व कर दिया गया। उसने एक बॉटलिंग संयंत्र को अनुमति दी कि वह इन सूखे दिनों में भी मांजरा बांध से 20 हजार लीटर पानी निकाल रहा है।

दूसरा उत्तर है कि अकेले लातूर जिले में 90,000 गहरे बोरवैल हैं। लातूर ने इनसे इतना पानी खींचा कि वहां भूजल स्तर में गिरावट रफ्तार तीन मीटर प्रति वर्ष का आंकड़ा पार कर गई है।

तीसरा उत्तर है कि बगल में स्थित जिला सोलापुर में भूजल पुनर्भरण के अच्छे प्रयासों से लातूर ने कुछ नहीं सीखा।

चौथा उत्तर वह लालच है कि जो लातूर को गन्ने के लिए 6,90,000 लाख लीटर यानी प्रतिदिन 1890 लाख लीटर पानी निकाल लेने

की बेसमझी देती है ; जबकि परंपरागत तौर पर लातूर मूलत: दलहन और तिलहन का काफी मजबूत उत्पादक और विपणन क्षेत्र रहा है। दलहन-तिलहन को तो गन्ने से बीस हिस्से कम पानी चाहिए ; फिर भी लातूर को गन्ने का लालच है।
कहना न होगा कि लातूर, को जैसलमेर से बहुत कुछ सीखने की जरूरत है। हकीकत यह है कि **यदि लातूर अकेले गन्ने का लालच छोड़ दे, तो ही लातूर शहर और गांव दोनो की प्रतिदिन की आवश्यकताओं हेतु पानी की पूर्ति हो जायेगी। लातूर शहर को दैनिक आवश्यकताओं के लिए प्रतिदिन कुल 400 से 500 लाख लीटर और गांव को प्रतिदिन 200 से 300 लाख लीटर पानी चाहिए।**

तो संकट कहां है ? आसमान में या दिमाग में ??

महाराष्ट्र में गत् 60 वर्षों का सिंचाई पैटर्न देखिए : सिंचित क्षेत्र में बाजरा, ज्वार, अन्य अनाज, दाल, तिलहन और कपास की फसल करने की प्रवृति घटी है ; धान, गेहूं और गन्ना की बढ़ी है।
फसल चयन की उलटबांसी देखिए कि सिंचित क्षेत्र में इन फसलो को प्राथमिकता इसके बावजूद है कि महाराष्ट्र में इन फसलों का सिंचाई खर्च अन्य राज्यों की तुलना में काफी अधिक है। उदाहरण के तौर पर उत्तर प्रदेश की तुलना में महाराष्ट्र में गन्ना उत्पादन में पानी खर्च साढ़े नौ गुना तक, धान-गेहूं में सवा गुना तक, कपास में दस गुना तक और सब्जियों में सवा सात गुना तक अधिक है।
सब जानते हैं कि 'हरित क्रांति' का ढोल बजाने में जो-जो राज्य आगे रहे, आज उनके पानी का ढोल फूट चुका है ; फिर भी व्यावसायिक खेती की जिद् क्यों ? पानी नहीं है तो किसने कहा कि महाराष्ट्र के किसान केला, अंगूर, गन्ना, चावल और प्याज जैसी अधिक पानी वाली फसलों को अपनी प्राथमिक फसल बनायें ?
यही हाल जिलावार 153 मिलीमीटर से लेकर 644 मिलीमीटर वार्षिक वर्षा औसत वाले बुंदेलखण्ड का है। चंदेलकालीन तालाबों के मशहूर बुंदेलखण्ड आज खदान, जंगल कटान और ज़मीन हड़पो अभियान का शिकार है। समाधान के रूप में वहां नदी जोड़, बोरवैल और पैकेज जा रहे हैं। उत्तर प्रदेश सरकार 80,000 करोड़ का पैकेज मांग रही है।

यह समाधान नहीं है।

कम बारिश हो, तो खेती सिर्फ आजीविका का साधन हो सकती है, सारी सुविधायें और सपने पूरे करने का नहीं। अत: जैसलमेर ने अपने को खेती पर कम, मवेशी और कारीगरी पर अधिक निर्भर बनाया है। यही रास्ता है। यदि जैसलमेर यह कर सकता है, तो मराठवाड़ा और बुंदेलखण्ड क्यों नहीं कर सकते ? वे क्यों नहीं कम अवधि व कम पानी वाली फसलों को अपनी प्राथमिक फसल बना सकते ? महाराष्ट्र शासन को किसने बताया कि जल के दुरुपयोग को बढ़ावा देने वाली नहरी सिंचाई को बढ़ावा दे ? उसे किसने रोका कि वह बूंद-बूंद सिंचाई व फव्वारे जैसी अनुशासित सिंचाई पद्धतियों को न अपनाये ? कम पानी की फसलों को बढ़ावा देने के लिए उनके न्यूनतम समर्थन मूल्य में वृद्धि जरूरी है। इसे लेकर महाराष्ट्र सरकार के हाथ किसने बांधे हैं ? 'खेत का पानी खेत में' और ; बारिश का पानी धरती के पेट में' जैसे नारों पर कहां किसी और का एकाधिकार है ? सब जानते हैं कि रासायनिक खाद, मिट्टी कणों को बिखेरकर उसकी ऊपरी परत की जल संग्रहण क्षमता घटा देती है। गोबर आदि की देसी खाद, मिट्टी कणों को बांधकर ऊपरी परत में नमी रोककर रखती है। इससे सिंचाई में कम पानी लगता है। खेत समतल हो, तो भी कम सिंचाई में पानी पूरे खेत में पहुंच जाता है। ग्रीन हाउस, पॉली हाउस, पक्की मेड़बंदी, आदि क्रमश: कम सिंचाई, कम पानी में खेती की ही जुगत हैं। इन्हे अपनाने की रोक कहां हैं ?
कहना न होगा कि वैश्विक तापमान और जलवायु परिवर्तन को दोष देने से पहले, हमें अपनी स्थानीय कारगुजारियों को सुधारना होगा। वर्षा जल संचयन और उपयोग में अनुशासन का कोई विकल्प नहीं है। उपयोग योग्य उपलब्ध कुल जल में से 80 प्रतिशत का उपयोग करने वाले किसान पर इसकी जिम्मेदारी, निस्संदेह सबसे अधिक है। जैसलमेर की सीख यही है। क्या हम सीखेंगे ?

परिचय -:

अरुण तिवारी

लेखक ,वरिष्ट पत्रकार व् सामजिक कार्यकर्ता

1989 में बतौर प्रशिक्षु पत्रकार दिल्ली प्रेस प्रकाशन में नौकरी के बाद चौथी दुनिया साप्ताहिक, दैनिक जागरण-दिल्ली, समय सूत्रधार पाक्षिक में क्रमश: उपसंपादक, वरिष्ठ उपसंपादक कार्य। जनसत्ता, दैनिक जागरण, हिंदुस्तान, अमर उजाला, नई दुनिया, सहारा समय, चौथी दुनिया, समय सूत्रधार, कुरुक्षेत्र और माया के अतिरिक्त कई सामाजिक पत्रिकाओं में रिपोर्ट लेख, फीचर आदि प्रकाशित।

1986 से आकाशवाणी, दिल्ली के युववाणी कार्यक्रम से स्वतंत्र लेखन व पत्रकारिता की शुरुआत। नाटक कलाकार के रूप में मान्य। 1988 से 1995 तक आकाशवाणी के विदेश प्रसारण प्रभाग, विविध भारती एवं राष्ट्रीय प्रसारण सेवा से बतौर हिंदी उद्घोषक एवं प्रस्तोता जुड़ाव।

इस दौरान मनभावन, महफिल, इधर-उधर, विविधा, इस सप्ताह, भारतवाणी, भारत दर्शन तथा कई अन्य महत्वपूर्ण ओ बी व फीचर कार्यक्रमों की प्रस्तुति। श्रोता अनुसंधान एकांश हेतु रिकार्डिंग पर आधारित सर्वेक्षण। कालांतर में राष्ट्रीय वार्ता, सामयिकी, उद्योग पत्रिका के अलावा निजी निर्माता द्वारा निर्मित अग्निलहरी जैसे महत्वपूर्ण कार्यक्रमों के जरिए समय-समय पर आकाशवाणी से जुड़ाव।

1991 से 1992 दूरदर्शन, दिल्ली के समाचार प्रसारण प्रभाग में अस्थायी तौर संपादकीय सहायक कार्य। कई महत्वपूर्ण वृतचित्रों हेतु शोध एवं आलेख। 1993 से निजी निर्माताओं व चैनलों हेतु 500 से अधिक कार्यक्रमों में निर्माण/ निर्देशन/ शोध/ आलेख/ संवाद/ रिपोर्टिंग अथवा स्वर। परशेप्शन, यूथ पल्स, एचिवर्स, एक दुनी दो, जन गण मन, यह हुई न बात, स्वयंसिद्धा, परिवर्तन, एक कहानी पत्ता बोले तथा झूठा सच जैसे कई श्रृंखलाबद्ध कार्यक्रम। साक्षरता, महिला सबलता, ग्रामीण विकास, पानी, पर्यावरण, बागवानी, आदिवासी संस्कृति एवं विकास विषय आधारित फिल्मों के अलावा कई राजनैतिक अभियानों हेतु सघन लेखन। 1998 से मीडियामैन सर्विसेज नामक निजी प्रोडक्शन हाउस की स्थापना कर विविध कार्य।

संपर्क -: ग्राम- पूरे सीताराम तिवारी, पो. महमदपुर, अमेठी, जिला- सी एस एम नगर, उत्तर प्रदेश , डाक पता: 146, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली- 92 Email:- amethiarun@gmail.com . फोन संपर्क: 09868793799/7376199844 _____

Disclaimer : The views expressed by the author in this feature are entirely his own and do not necessarily reflect the views of INVC NEWS .

आप इस लेख पर अपनी प्रतिक्रिया भेज सकते हैं। पोस्ट के साथ अपना संक्षिप्त परिचय और फोटो भी भेजें।

URL : https://www.internationalnewsandviews.com/इस-प्यास-की-पड़ताल-जरूरी-है/

INTERNATIONAL NEWS AND VIEW CORPORATION
INVC
अंतरराष्ट्रीय समाचार एवं विचार निगम

12th year of news and views excellency

Committed to truth and impartiality

Copyright © 2009 - 2019 International News and Views Corporation. All rights reserved.